M.L.S. College Sarisab-Pahi, Madhubani
(L.N.M.U., Darbhanga)
Department of Philosophy
Dr. SARITA KUSHWAHA

B.A. IInd (Sub.)
Paper N.- Indian & Western Ethics
Chap- Standard's of Morality [10]

Perfectionism (आत्मपूर्णतावाद) [3]

ग्रीन का आत्मपूर्णतावाद (Perfectionism of Green)

थॉमस हिल ग्रीन (1436-1882ई०), मूलतः आत्मपूर्णतावाद के समर्थक है और उनकी प्रसिद्ध पुस्तक है- 'Prolegomena to Ethics'. हेगेल के समान थॉमस हिल ग्रीन भी आत्मपूर्णतावाद के समर्थक है। ये हेगेल के आध्यात्मिक निरपेक्षवाद को स्वीकार करते है। इनके अनुसार भी सम्पूर्ण विश्व में एक ही आत्म-चैतन्य तत्व व्याप्त है। अतः सम्पूर्ण विश्व इसी आत्म-चैतन्य की अभिव्यक्ति है, परन्तु मनुष्य में यह चेतन तत्व विकासित रूप में है, क्योंकि मानव में विवेक या बुद्धि है।

ग्रीन ने प्राकृतिक प्रवृत्तियों से नैतिकता का उद्गम एवं विकास स्वीकार नही किया है। वे मनुष्य में आत्म चेतना तथा बुद्धि के विकास को ही नैतिकता के उद्गम और विकास का मूल आधार मानते है। ग्रीन मानते है कि मनुष्य का नैतिक जीवन विवेकमय जीवन है। विवेकपूर्ण जीवनयापन करने से ही नैतिक शुभ की प्राप्ति सम्भव है। नैतिक शुभ हमें विवेकपूर्ण कार्य करने से मिलती है। अन्य पूर्णतावादी विचारकों के जैसा ही ग्रीन का भी मानना है कि मनुष्य में वासना और विवेक दोनों है, अतः मनुष्य को अपने विवेक के द्वारा वासनाओं को नियंत्रित करना चाहिए। ग्रीन के अनुसार वास्तविक और स्थायी नैतिक शुभ वही है, जिससे मनुष्य को आध्यात्मिक संतोष प्राप्त होता है।

ग्रीन संकल्प स्वातन्त्र्य को भी आध्यात्मिक संतोष के लिए बहुत महत्व देते है। ग्रीन मानवीय कर्म की मूल

Scanned with CamScanner

प्रेरणा के साथ-साथ उसके परिणाम को भी पर्याप्त महत्व देते हैं। ग्रीन व्यक्तिगत हित को सामाजिक हित से पृथक नहीं मानते। हेगेल के समान ग्रीन भी सामाजिक चेतना को विकास का परिणाम मानते हैं। प्रारम्भ में व्यक्ति अपने संकुचित दृष्टि के कारण स्वार्थ सिद्धि के लिए सोचता था। फिर उसकी नैतिक चेतना विकसित हुयी और 'साम्प्रदायिक चेतना' से परिपूर्ण हुआ और साम्प्रदायिक हित के लिये कार्य करने लगा। व्यक्ति की चेतना का स्तर बढ़ा और वह नगर-राज्य में अपना हित समझने लगा। फिर व्यक्ति का विवेक और भी विकसित हुआ और वह सम्पूर्ण मानव जाति के हित में कार्य करने लगा। यह विकास का स्तर सम्पूर्ण मानव जाति के हित का स्तर है यें स्थिति ही आत्मपूर्णता की स्थिति है। अतः व्यक्तित्व पूर्णता 'विश्व-बन्धुत्व' में निहित है। यह ही आदर्शवादी नैतिकता है।

ब्रैडले का आत्मपूर्णतावाद (Perfectionism of Bradley)

ब्रैडले भी आत्मपूर्णतावादी (1846-1924 ई०) थे। उनकी प्रमुख पुस्तक 'Ethical Studies' है। हेगेल और ग्रीन के समान ब्रैडले भी आत्मपूर्णतावाद का समर्थन करते हैं। ब्रैडले भी स्वीकार करते हैं कि सम्पूर्ण विश्व में एकमात्र चैतन्य की सत्ता व्याप्त है। ब्रैडले के अनुसार 'आत्म-साक्षात्कार' मनुष्य का उच्चतम नैतिक आदर्श है। जब व्यक्तिगत कल्याण सामाजिक कल्याण में विलीन हो जाता है तब व्यक्ति को अपने सच्चे चैतन्य स्वरूप का ज्ञान अथवा आत्म-साक्षात्कार हो पाता है।

सामाजिक कल्याण के द्वारा आत्मोपलब्धि कैसे प्राप्त होती है? इसके लिए ब्रैडले एक नैतिक उक्ति बताते हैं। उनका मानना है कि 'मेरा स्थान और उससे सम्बन्धित कर्तव्य' (My station and its duties)। यही ब्रैडले का नैतिक सिद्धान्त है। सभी पूर्णतावादी यह मानते हैं कि 'आत्म त्याग से ही

Scanned with CamScanner

आत्मलाभ संभव है।' हेगेल, ग्रीन और ब्रैडले व्यक्ति को समाज का अंग मानते हैं और 'समाज की आंगिक धारणा' में विश्वास करते हैं। व्यक्ति समाज पर और समाज व्यक्ति पर निर्भर है। ब्रैडले का कथन है कि-"नैतिक कर्त्तव्यों से युक्त मनुष्य के जीवन का रूप मुख्यतः साकल्य की उस व्यवस्था में उसके स्थान से बनता है जो (व्यवस्था) राज्य है और राज्य अंशतः अपने कानूनों और संस्थाओं और उससे भी अधिक अपनी चेतना द्वारा मनुष्य को उस प्रकार का जीवन प्रदान करता है, जिस प्रकार का जीवन वह व्यतीत करता है और उसे व्यतीत करना चाहिए।"

आत्मपूर्णतावाद : मूल्यांकन

आत्मपूर्णतावाद को दार्शनिकों ने सर्वोच्च नैतिक सिद्धान्त माना है। इसकी विशेषता यह है कि यह स्वार्थ और परार्थ का, व्यक्तिगत हित और सामाजिक हित का समन्वय करता है व्यक्ति को समाज कल्याण की दृष्टि से ही कोई कार्य करना चाहिए। इसी में व्यक्ति और समाज दोनों का कल्याण है, परन्तु इस मत में कुछ कठिनाइयाँ भी हैं-

1. इसके अनुसार आत्म-सिद्धि ही आत्म-पूर्णता है। आत्म-पूर्णता सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास है जो बुद्धि के द्वारा इच्छाओं का नियन्त्रण कहा जाता है, इससे आत्मसिद्धि क्या है पता नहीं चलता।
2. आत्मपूर्णतावाद के अनुसार व्यक्तित्व का पूर्ण विकास ही आत्म-पूर्णता है। व्यक्तित्व का पूर्ण विकास समाज में ही सम्भव है अतः मनुष्य को समाज की दृष्टि में रखकर ही कार्य करना चाहिए। यह सिद्धान्त अच्छा है परन्तु व्यवहार में इसमें कठिनाई है क्योंकि व्यक्ति सामाजिक प्राणी होने के साथ-साथ निजी स्वार्थी भी है
3. इस सिद्धान्त के द्वारा व्यक्ति के हृदय में उठने वाले अन्तर्द्वन्द्व की व्याख्या नहीं हो पाती है।
4. कुछ विद्वानों ने इसे अन्ततोगत्वा स्वार्थी सिद्धान्त ही बताया है।

Savita Kushwaha
21/04/2020

Scanned with CamScanner